वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 341

णमोकार धाम तीर्थ परिचय एवं पूजा

–प्रस्तुति –

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव, 11 अक्टूबर 2011 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में
पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
''प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर वर्ष'' के अन्तर्गत सनावद (म.प्र.) में
णमोकार धाम तीर्थ पर आयोजित वेदी प्रतिष्ठा एवं पंचपरमेष्ठी प्रतिमा
विराजमान के अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.-250404
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2538, फाल्गुन शु. तृतीया	मूल्य
1100 प्रतियाँ	24 फरवरी 2012	20/-रु.

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक :–

स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ
1.	णमोकार धाम तीर्थ परिचय	3
2.	णमोकार पैंतीस व्रत विधि	4
3.	णमोकार मंत्र का अर्थ एवं महिमा	5
4.	णमोकार महामंत्र पूजा	15
5.	णमोकार मंत्र का माहात्म्य (संस्कृत एवं हिन्दी)	20
6.	णमोकार चालीसा	27
7.	भजन (णमोकार मंत्र का)	30
8.	भजन (सनावद में णमोकार धाम तीर्थ प्यारा है)	31
9.	भजन (णमोकार धाम तीरथ महान है)	32
10.	भजन (वन्दना करूँ मैं णमोकार धाम की)	33
11.	भजन (णमोकार बोलो फिर आँख खोलो)	34
12.	आरती	35
13.	योजना प्रदात्री गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी-परिचय	36
14.	प्रेरणास्रोत क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज-परिचय	38
15.	सानिध्य प्रदाता स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी-परिचय	40

णमोकार धाम तीर्थ का परिचय

-आर्यिका चन्दनामती

''तीर्यते संसारसागरो येन असौ तीर्थः'' अर्थात् जिसके द्वारा संसाररूपी महासमुद्र को तिरा जाता है, पार किया जाता है, उसे तीर्थ कहते हैं। इस परिभाषा के अनुसार जिनधर्म सबसे उत्तम तीर्थ है और जिनधर्म का मूलमंत्र है–णमोकार महामंत्र। इस महामंत्र के नाम से निर्मित तीर्थ का यहाँ संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है।

मध्यप्रदेश के निमाड़ क्षेत्र में इंदौर-सनावद रोड पर बने इस तीर्थ का नाम है– **''णमोकार धाम तीर्थ''**। सन् 1996 में परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का ससंघ मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की ओर विहार करते हुए **''सनावद''** नगर में मंगल पदार्पण हुआ। उनके संघ में सन् 1967 से (ब्र. मोतीचंद के रूप में) साधनारत क्षुल्लक मोतीसागर महाराज (सन् 1987 में दीक्षित हुए) की प्रबल भावना थी कि मेरी जन्मभूमि सनावद में किसी धार्मिक रचना का निर्माण हो, सनावद पहुँचने पर उन्होंने पूज्य माताजी से भावना व्यक्त की अतः माताजी ने चिन्तन करके पंचपरमेष्ठी भगवन्तों की प्रतिमा और णमोकार मंत्र के 35 अक्षरों से समन्वित एक पवित्र योजना **''णमोकार धाम''** तीर्थ के नाम से वहाँ साकार करने के लिए समाज को निर्देश दिया। आनन-फानन में योजना बनी और तीर्थ के लिए भूमि प्रदान करने का पुण्य प्राप्त किया क्षुल्लक मोतीसागर महाराज के गृहस्थावस्था के लघु भ्राता श्री प्रकाशचंद जैन सराफ ने। अतः दिनाँक 31 मार्च 1996, चैत्र शुक्ला द्वादशी, रविवार को संघ सान्निध्य में तीर्थ का शिलान्यास हो गया।

पुनः इस निर्माणाधीन तीर्थ परिसर में सर्वप्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव भगवान की सवा सात फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान होते ही तीर्थयात्रियों का आवागमन प्रारंभ हो गया। तीर्थ के प्रमुख स्तंभ श्रावकरत्न श्री प्रकाशचंद जी द्वारा अभिसिंचित सुन्दर बाग-बगीचे वाले इस उपवन में क्रमशः एक चैत्यालय, कुँआ, कुछ कमरे और 'णमोकार धाम मंदिर' का निर्माण भी हो गया।

पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने योजना शिल्पी के रूप में इस मंदिर के अंदर णमोकार मंत्र के पाँच पदों को साकार करने हेतु पंचपरमेष्ठी भगवन्तों की पाँच प्रतिमाएँ और उनके नीचे मंत्र पद (पच्चीकारी वाले) लिखवाकर तीर्थ को एक अनूठा स्वरूप प्रदान कर दिया है। इन पंचपरमेष्ठी की पाँचों प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सन् 2010, फाल्गुन शु. पंचमी को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में सम्पन्न हो चुकी है। पुनः सन् 2012 में फाल्गुन शु. तृतीया, 24 फरवरी को ये प्रतिमाएँ णमोकार धाम मंदिर में विराजमान हो रही हैं।

जो भी भक्त इन प्रतिमाओं का अभिषेक करेंगे, वे परमेष्ठियों के पवित्र गंधोदक के साथ-साथ अनादिनिधन-अपराजित णमोकार महामंत्र के 35 अक्षरों के मंत्रित जल से भी अपने तन-मन को पावन, सुरक्षित और स्वस्थ करने का अभूतपूर्व लाभ प्राप्त करेंगे। इस तीर्थ पर सदैव आर्ष परम्परानुसार तथा बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर मुनि महाराज की मान्यतानुसार बीसपंथ आम्नाय (पंचामृत अभिषेक, स्त्रियों द्वारा अभिषेक, फल-फूल चढ़ाने की परम्परा, शासन देव-देवी की पूजा) चल रही है और आगे भी सदैव यही परम्परा चलेगी। आने वाले दिगम्बर जैन तीर्थयात्री और भक्तगण अपनी इच्छानुसार बीसपंथ और तेरहपंथ दोनों परम्परा से अभिषेक-पूजन कर सकते हैं। इसमें कोई विवाद की स्थिति इस तीर्थ पर नहीं रखी गई है। यह अत्यन्त बुद्धिमत्ता और पारस्परिक सौहार्द का परिचायक है।

यह तीर्थ युग-युग तक संसार को महामंत्र णमोकार की महिमा से परिचित कराता रहे और तीर्थ की प्रबंधकारिणी कमेटी के समस्त कार्यकर्ता भौतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ तीर्थ के सच्चे अर्थ को जीवन में साकार करें, यही मंगलकामना है।

-28 जनवरी 2012, बसंत पंचमी

णमोकार पैंतीस व्रत विधि

नमस्कार पैंतीसी व्रत में सप्तमी के सात उपवास, पंचमी के पाँच उपवास, चतुर्दशी के चौदह उपवास और नवमी के नौ उपवास बताये गये हैं। णमोकार मंत्र में पैंतीस अक्षर होते हैं, एक-एक अक्षर का एक-एक उपवास किया जाता है। इस व्रत के आरंभ करने में किसी मास की किसी विशेष तिथि का नियम नहीं है। केवल तिथि के अनुसार ही व्रत किया जाता है।

इस व्रत में उपवास के दिन अभिषेक करके पंचपरमेष्ठी णमोकार मंत्र पूजन करना चाहिए तथा–

मंत्र–**'ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं', ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं, ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं, ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं''** इस मंत्र का जाप किया जाता है।

G

णमोकार मंत्र का अर्थ एवं महिमा

लेखिका—गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।1।।

अरिहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो और लोक में सर्व साधुओं को नमस्कार हो।

(1) 'णमो अरिहंताणं'

'अरिहननादरिहंता!' 'अरि' अर्थात् शत्रुओं के 'हननात्' अर्थात् नाश करने वाले होने से 'अरिहंत' कहलाते हैं।

नरक, तिर्यंच, कुमानुष और प्रेत इन पर्यायों में निवास करने से होने वाले जो अशेष दुःख हैं, उन दुःखों को प्राप्त कराने में निमित्त कारण होने से मोह को 'अरि' अर्थात् शत्रु कहा है।

शंका—केवल मोह को ही अरि मान लेने पर शेष कर्मों का व्यापार निष्फल हो जावेगा ?

समाधान—ऐसी बात नहीं है, क्योंकि बाकी के सभी कर्म मोह के ही आधीन हैं। मोह के बिना शेष कर्म अपने-अपने कार्य की उत्पत्ति में व्यापार करते हुए नहीं पाये जाते हैं। जिससे कि वे अपने कार्य में स्वतंत्र समझे जावें। इसलिए सच्चा अरि मोह ही है और शेष कर्म उसी के आधीन हैं।

शंका—मोह कर्म के नष्ट हो जाने पर कितने ही काल तक शेष कर्मों की सत्ता रहती है, इसलिए उनका मोह के आधीन होना नहीं बनता है ?

समाधान—ऐसा नहीं समझना चाहिए, क्योंकि मोहरूप अरि के नष्ट हो जाने पर जन्म-मरण की परम्परारूप संसार के उत्पादन की सामर्थ्य शेष कर्मों

में नहीं रहती है। इसलिए उनका सत्त्व असत्त्व के समान हो जाता है तथा केवलज्ञानादि सम्पूर्ण आत्म गुणों के आविर्भाव के रोकने में समर्थ कारण होने से भी मोह प्रधान शत्रु है और उस शत्रु के नाश करने से 'अरिहंत' यह संज्ञा प्राप्त होती है।

'रजोहननाद्वा अरिहंता'। अथवा रज अर्थात् आवरण कर्मों के नाश करने से 'अरिहंत' होते हैं। ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्म धूलि की तरह बाह्य और अंतरंग स्वरूप समस्त त्रिकालगोचर अनंत अर्थपर्याय और व्यंजनपर्याय स्वरूप वस्तुओं को विषय करने वाले बोध और अनुभव के प्रतिबंधक होने से रज कहलाते हैं। मोह को भी रज कहते हैं, क्योंकि जिस प्रकार जिनका मुख भस्म से व्याप्त होता है, उनमें जिह्मभाव—कार्य की मदंता देखी जाती है, उसी प्रकार मोह से जिनकी आत्मा व्याप्त हो रही है, उनके भी जिह्मभाव देखा जाता है अर्थात् उनकी स्वानुभूति में कालुष्य, मंदता या कुटिलता पाई जाती है। शेष कर्मों का विनाश इन तीन कर्मों के विनाश का अविनाभावी है।

'रहस्याभावाद्वा अरिहंता'। अथवा 'रहस्य' के अभाव से भी अरिहंत होते हैं। रहस्य अंतराय कर्म को कहते हैं। इस अंतराय कर्म का नाश शेष तीन घातिया कर्मों के नाश का अविनाभावी है और अंतराय कर्म के नाश होने पर अघातिया कर्म भ्रष्ट बीज के समान निःशक्त हो जाते हैं।

'अतिशयपूजार्हत्वाद्वार्हन्तः।' अथवा सातिशय पूजा के योग्य होने से अर्हंत होते हैं, क्योंकि गर्भ, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण इन पाँचों कल्याणकों में देवों द्वारा की गई पूजाएँ देव, असुर और मनुष्यों को प्राप्त पूजाओं से अधिक अर्थात् महान् है, इसलिए इन अतिशयों के योग्य होने से अर्हन्त होते हैं।

अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतवीर्य, क्षायिक-सम्यक्त्व, क्षायिकदान, क्षायिकलाभ, क्षायिकभोग और क्षायिकउपभोग आदि प्रगट हुए अनंत गुण स्वरूप होने से जिन्होंने यहीं पर सिद्धस्वरूप प्राप्त कर लिया है, स्फटिक मणि के पर्वत के मध्य से निकलते हुए सूर्य बिम्ब के समान जो देदीप्यमान हो रहे हैं, अपने शरीर प्रमाण होने पर भी जिन्होंने अपने ज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त कर लिया है, अपने ज्ञान में ही सम्पूर्ण प्रमेय के

प्रतिभासित होने से जो विश्वरूपता को प्राप्त हो गये हैं, सम्पूर्ण रोगों के दूर हो जाने के कारण जो निरामय हैं, सम्पूर्ण पापरूपी अंजन के नष्ट हो जाने से जो निरंजन है और दोषों की कलाएँ– सम्पूर्ण दोषों से रहित होने के कारण जो निष्कलंक हैं, ऐसे उन अरिहंतों को नमस्कार हो।

(2) 'णमो सिद्धाणं'

जो निष्ठित अर्थात् पूर्णतः अपने स्वरूप में स्थित हैं, कृतकृत्य हैं, जिन्होंने अपने साध्य को सिद्ध कर लिया है और जिनके ज्ञानावरणादि आठ कर्म नष्ट हो चुके हैं उन्हें सिद्ध कहते हैं।

शंका–सिद्ध और अरिहंतों में क्या भेद है ?

समाधान–आठ कर्मों को नष्ट करने वाले सिद्ध होते हैं और चार घातिया कर्मों को नष्ट करने वाले अरिहंत होते हैं। यही उन दोनों में भेद है।

शंका–चार घातिया कर्मों के नष्ट हो जाने पर अरिहंतों की आत्मा के समस्त गुण प्रगट हो जाते हैं इसलिए सिद्ध और अरिहंत में गुणकृत भेद नहीं हो सकता है ?

समाधान–ऐसा नहीं है, क्योंकि अरिहंतों के अघातिया कर्मों का उदय और सत्त्व दोनों विद्यमान हैं। इसलिए इन दोनों में भेद है।

शंका–ये अघातिया कर्म शुक्लध्यानरूप अग्नि के द्वारा अधजले हो जाने के कारण उदय और सत्त्व के विद्यमान रहते हुए भी अपना कार्य करने में समर्थ नहीं हैं ?

समाधान–ऐसा भी नहीं है, क्योंकि यदि आयु आदि कर्म अपने कार्य में असमर्थ माने जायें, तो शरीर का पतन हो जाना चाहिए, परन्तु शरीर आदि का पतन तो होता नहीं है अतः आयु आदि शेष कर्मों का कार्य करना सिद्ध है।

शंका–उन कर्मों का कार्य तो चौरासी लाख योनिरूप जन्म, जरा और मरण से युक्त संसार है। वह अघातिया कर्मों के रहने पर भी अरिहंत परमेष्ठी के नहीं पाया जाता है तथा अघातिया कर्म आत्मा के गुणों के घात करने में असमर्थ भी हैं। इसलिए अरिहंत और सिद्ध में गुणों की अपेक्षा कोई भेद नहीं है ?

समाधान–ऐसा नहीं है, क्योंकि जीव के ऊर्ध्वगमन स्वभाव का प्रतिबंधक

आयु कर्म का उदय उनके विद्यमान है तथा सलेपत्व और निर्लेपत्व की अपेक्षा तो इन दोनों में भेद स्पष्ट ही है।

आठों कर्मों से रहित, आठ गुणों से युक्त और तीन लोक के मस्तक पर विराजमान ऐसे सिद्धपरमेष्ठियों को यहाँ नमस्कार किया गया है।

(3) 'णमो आइरियाणं'

जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और वीर्य इन पाँच प्रकार के आचारों का स्वयं आचरण करते हैं और दूसरे साधुओं से आचरण कराते हैं, उन्हें आचार्य कहते हैं। जो चौदह विद्यास्थानों के पारंगत हैं, ग्यारह अंग के धारी हैं अथवा आचारांग मात्र के धारी हैं अथवा तत्कालीन स्वसमय और परसमय में पारंगत हैं, मेरु के समान निश्चल हैं, पृथ्वी के समान सहनशील हैं, जिन्होंने समुद्र के समान मल-दोषों को बाहर फेंक दिया है और जो सात प्रकार के भय से रहित हैं उन्हें आचार्य कहते हैं।

प्रवचनरूपी समुद्र में अवगाहन करने से जिनकी बुद्धि निर्मल हो गई है, जो निर्दोषरीति से छह आवश्यकों का पालन करते हैं, मेरु के समान निष्कम्प हैं, शूरवीर हैं, सिंह के समान निर्भीक हैं, निर्दोष हैं, देश, कुल और जाति से शुद्ध हैं, जो संघ के संग्रह और अनुग्रह में कुशल हैं, कीर्तिमान हैं, जो सारण–आचरण, वारण-निषेध और शोधन–व्रतों की शुद्धि करने वाली क्रियाओं में नित्य ही उद्युक्त हैं, उन्हें आचार्य परमेष्ठी कहते हैं, ऐसे आचार्यों को यहाँ नमस्कार किया गया है।

(4) 'णमो उवज्झायाणं'

चौदह विद्यास्थान–चौदह पूर्वों का व्याख्यान करने वाले उपाध्याय परमेष्ठी होते हैं। अथवा तत्कालीन परमागम के व्याख्यान करने वाले उपाध्याय होते हैं। वे संग्रह–शिष्यों को दीक्षा देना और अनुग्रह–उनका संरक्षण करना, आदि गुणों को छोड़कर पहले कहे गये आचार्य के समस्त गुणों से युक्त होते हैं।

जो साधु चौदह पूर्वरूपी समुद्र में प्रवेश करके मोक्षमार्ग में स्थित हैं तथा मोक्ष के इच्छुक शीलंधरों अर्थात् मुनियों को उपदेश देते हैं, उन मुनीश्वरों को

उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं। ऐसे उपाध्यायों को यहाँ नमस्कार किया गया है।

(5) 'णमो लोए सव्वसाहूणं'

लोक में अर्थात् ढाई द्वीपवर्ती सर्व साधुओं को नमस्कार हो। जो अनंतज्ञानादि रूप शुद्ध आत्मा के स्वरूप की साधना करते हैं उन्हें साधु कहते हैं। जो पाँच महाव्रतों को धारण करते हैं, तीन गुप्तियों से सुरक्षित हैं, अठारह हजार शील के भेदों को धारण करते हैं और चौरासी लाख उत्तर गुणों का पालन करते हैं, वे साधु परमेष्ठी होते हैं।

सिंह के समान पराक्रमी, गज के समान स्वाभिमानी, बैल के समान भद्र प्रकृति, मृग के समान सरल, पशु के समान निरीह गोचरी वृत्ति करने वाले, पवन के समान निःसंग, सूर्य के समान तेजस्वी, सागर के समान गंभीर, सुमेरु के समान परीषह और उपसर्गों के आने पर अकम्प, चन्द्रमा के समान शांतिदायक, मणि के समान प्रभापुंजयुक्त, पृथ्वी के समान सर्वबाधाओं को सहने वाले, सर्प के समान अनियत वसतिका आदि में निवास करने वाले, आकाश के समान निरालंबी और सदा काल मोक्ष का अन्वेषण करने वाले साधु होते हैं। ऐसे सम्पूर्ण कर्मभूमियों में उत्पन्न होने वाले त्रिकालवर्ती साधुओं को नमस्कार किया गया है।

पाँच परमेष्ठियों को नमस्कार करने में इस नमस्कार मंत्र में 'सर्व' और 'लोक' पद हैं वे अंत दीपक हैं, अतः सम्पूर्ण क्षेत्र में रहने वाले त्रिकालवर्ती अरिहंत आदि देवताओं को नमस्कार करने के लिए उन्हें प्रत्येक नमस्कारात्मक पद के अर्थ के साथ जोड़ लेना चाहिए।

शंका—जिन्होंने आत्मस्वरूप को प्राप्त कर लिया है, ऐसे अरिहंत और सिद्धपरमेष्ठी को नमस्कार करना योग्य है, किन्तु आचार्यादिक तीन परमेष्ठियों ने आत्मस्वरूप को प्राप्त नहीं किया है, अतः उनमें देवपना नहीं आ सकता है, इसलिए उन्हें नमस्कार करना योग्य नहीं है ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि अपने-अपने भेदों से अनंत भेदरूप रत्नत्रय ही देव है, अतएव रत्नत्रय से युक्त जीव भी देव हैं, अन्यथा (यदि रत्नत्रय की अपेक्षा देवपना न माना जाये तो) सम्पूर्ण जीवों को देव मानने की आपत्ति आ जायेगी। इसलिए यह सिद्ध हुआ कि आचार्यादिक भी रत्नत्रय के

यथायोग्य धारक होने से देव हैं। क्योंकि अरिहंतादि से आचार्यादि में रत्नत्रय के सद्भाव की अपेक्षा कोई अन्तर नहीं है। अर्थात् जिस तरह अरिहंत, सिद्ध में रत्नत्रय का सद्भाव है, उसी तरह आचार्यादि में भी रत्नत्रय का सद्भाव है अतः आंशिक रत्नत्रय की अपेक्षा से इनमें देवपना बन जाता है।

आचार्यादि में स्थित तीन रत्नों का सिद्धपरमेष्ठी में स्थित रत्नों से भी भेद नहीं है। यदि दोनों के रत्नत्रय में सर्वथा भेद मान लिया जावे, तो आचार्यादि में स्थित रत्नों के अभाव का प्रसंग आ जावेगा।

शंका—सम्पूर्ण रत्न अर्थात् पूर्णता को प्राप्त रत्नत्रय ही देव है, रत्नों का एकदेश देव नहीं हो सकता है ?

समाधान—ऐसा कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि रत्नों के एकदेश में देवपना न मानने पर रत्नों की समग्रता में भी देवपना नहीं बन सकता है। अर्थात् जो कार्य जिसके एकदेश में नहीं देखा जाता है, वह उसकी समग्रता में कहाँ से आ सकता है ?

शंका—आचार्यादि में स्थित रत्नत्रय समस्त कर्मों के क्षय करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं, क्योंकि उनके रत्न एकदेश हैं ?

समाधान—यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि "जिस प्रकार पलाल राशि को जलानेरूप कार्य करने में अग्निसमूह समर्थ है, उसी प्रकार से अग्नि का एक कण भी उसको जलाने में समर्थ है। ऐसे ही यहाँ पर भी समझना चाहिए। इसलिए आचार्यादि भी देव हैं, यह बात निश्चित हो जाती है।[1]"

अरिहंतों को पहले नमस्कार क्यों किया ?

शंका—सर्वप्रकार के कर्मलेप से रहित सिद्धपरमेष्ठी के विद्यमान रहते हुए अघातिया कर्मों के लेप से युक्त अरिहंतों को आदि में नमस्कार क्यों किया जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि सबसे अधिक गुण वाले सिद्धों में श्रद्धा की अधिकता के कारण अरिहंत परमेष्ठी ही हैं, अर्थात् अरिहंत परमेष्ठी के निमित्त (उपदेश) से ही अधिक गुण वाले सिद्धों में सबसे अधिक

1. "अग्निसमूहकार्यस्य पलालराशिदाहस्य तत्कणादप्युपलम्भात्। तस्मादाचार्यादयोऽपि देवा इति स्थितम्।"

श्रद्धा उत्पन्न होती है। अथवा यदि अरिहंत परमेष्ठी न होते तो हम लोगों को आप्त, आगम और पदार्थ का परिज्ञान नहीं हो सकता था किन्तु अरिहंत परमेष्ठी के प्रसाद से हमें इस बोध की प्राप्ति हुई है। इसलिए उपकार की अपेक्षा भी आदि में अरिहंतों को नमस्कार किया जाता है।

शंका—इस प्रकार आदि में अरिहंतों को नमस्कार करना तो पक्षपात है ?

समाधान—ऐसा नहीं कहना, क्योंकि 'न पक्षपातो दोषाय, शुभपक्षवृत्तेः श्रेयोहेतुत्वात्'। यह पक्षपात दोषोत्पादक नहीं है। किन्तु शुभ पक्ष में रहने से वह कल्याण का ही कारण है तथा द्वैत को गौण करके अद्वैत की प्रधानता से किये गये नमस्कार में द्वैतमूलक पक्षपात बन भी तो नहीं सकता है। अर्थात् पक्षपात वहीं संभव है जहाँ दो वस्तुओं में से किसी एक की ओर अधिक आकर्षण होता है। परन्तु यहाँ परमेष्ठियों को नमस्कार करने में दृष्टि प्रधानतया गुणों की ओर रहती है, अवस्थाभेद की प्रधानता नहीं है। इसलिए यहाँ पक्षपात किसी भी प्रकार संभव नहीं है।

अथवा आप्त की श्रद्धा से ही आप्त, आगम और पदार्थों के विषय में दृढ़ श्रद्धा उत्पन्न होती है, इस बात को प्रसिद्ध करने के लिए भी आदि में अरिहंतों को नमस्कार किया गया है। श्री गौतमस्वामी भी कहते हैं–

जस्संतियं धम्मपहं णिगच्छे, तस्संतियं वेणयियं पउंजे।
सक्कारए तं सिरपंचएण, काएण वाया मणसा य णिच्चं।।

जिनके समीप मैंने धर्ममार्ग को प्राप्त किया है उनके समीप विनय युक्त होकर प्रवृत्ति करता हूँ तथा उनका मैं शिरपंचक अर्थात् दोनों घुटने टेककर, दोनों हाथ जोड़कर और मस्तक को पृथ्वी पर झुकाकर पंचांग नमस्कारपूर्वक मन-वचन-काय से निरन्तर सत्कार करता हूँ।

इस महामंत्र के अर्थ को समझकर यह निश्चित हो जाता है कि 'णमो अरिहंताणं' और 'णमो अरहंताणं' दोनों पाठ शुद्ध हैं तथा अरिहंत और सिद्धों में रत्नत्रय पूर्ण प्रकट हो चुके हैं किन्तु आचार्य, उपाध्याय और साधु में ये रत्नत्रय एकदेश ही प्रकट हुए हैं, फिर भी ये तीनों परमेष्ठी भी पूज्य हैं, वंद्य हैं। सिद्धों के यद्यपि सम्पूर्ण कर्म समाप्त हो चुके हैं फिर भी अरिहंत परमेष्ठी उपदेशक होने से सर्वोपकारी हैं इसलिए उन्हें पहले नमस्कार करने में दोष नहीं

है प्रत्युत गुण ही है, क्योंकि शुभपक्ष में किया गया पक्षपात, पक्षपात नहीं कहलाता है वह हित के लिए ही होता है। इस महामंत्र को पढ़ते समय प्रत्येक पदों के अर्थ का चिंतवन करना चाहिए।

पंचपरमेष्ठी वाचक इस महामंत्र में सम्पूर्ण द्वादशांग निहित है। यथा–

''आचार्यों ने द्वादशांग जिनवाणी का वर्णन करते हुए प्रत्येक की पदसंख्या तथा समस्त श्रुतज्ञान अक्षरों की संख्या का वर्णन किया है। इस महामंत्र में समस्त श्रुतज्ञान विद्यमान है क्योंकि पंचपरमेष्ठी के अतिरिक्त अन्य श्रुतज्ञान कुछ नहीं है। अतः यह महामंत्र समस्त द्वादशांग जिनवाणीरूप है। इस महामंत्र का विश्लेषण करने पर निम्न निष्कर्ष सामने आते हैं–

इस मंत्र में 5 पद और 35 अक्षर हैं। णमो अरिहंताणं=7 अक्षर, णमो सिद्धाणं=5, णमो आइरियाणं=7, णमो उवज्झायाणं=7, णमो लोए सव्वसाहूणं= 9 अक्षर, इस प्रकार इस मंत्र में कुल 35 अक्षर हैं। स्वर और व्यंजनों का विश्लेषण करने पर ऐसा प्रतीत होता है–

यथा–

ण्+अ+म्+ओ+अ+र्+इ+ह्+अं+त्+आ+ण्+अं।
ण्+अ+म्+ओ+स्+इ+द्+ध्+आ+ण्+अं।
ण्+अ+म्+ओ+आ+इ+र्+इ+य्+आ+ण्+अं।
ण्+अ+म्+ओ+उ+व्+अ+ज्+झ्+आ+य्+आ+ण्+अं।
ण्+अ+म्+ओ+ल्+ओ+ए+स्+अ+व्+व्+अ+स्+आ+ह्+ऊ+ण्+अं।

इस तरह प्रथम पद में 6 व्यंजन, 6 स्वर, द्वितीय पद में 6 व्यंजन, 5 स्वर, तृतीय पद में 5 व्यंजन, 7 स्वर, चतुर्थ पद में 6 व्यंजन, 7 स्वर, पंचम पद में 8 व्यंजन, 9 स्वर हैं। इस मंत्र में सभी वर्ण अजंत हैं, यहाँ हलन्त एक भी वर्ण नहीं है। अतः 35 अक्षरों में 35 स्वर और 30 व्यंजन होना चाहिए था किन्तु यहाँ स्वर 34 हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि 'णमो अरिहंताणं' इस पद में 6 ही स्वर माने जाते हैं। मंत्रशास्त्र के व्याकरण के अनुसार 'णमो अरिहंताणं' पद के 'अ' का लोप हो जाता है। यद्यपि प्राकृत में 'एङः'[1]-

1. त्रिविक्रम व्याकरण पृ. 4, सूत्र 21/2। 2. जैन सिद्धांत कौमुदी, पृ. 4, सूत्र 1/2/2।

नेत्यनुवर्तते। एङि त्येदोतौ। एदोतोः संस्कृतोक्तः संधिः प्राकृते तु न भवति। यथा देवो अहिणंदणो, अहो अच्चरिअं, इत्यादि। सूत्र के अनुसार संधि न होने से 'अ' का अस्तित्व ज्यों का त्यों रहता है। 'अ' का लोप या खंडाकार नहीं होता है, किन्तु मंत्रशास्त्र में 'बहुलम्' सूत्र की प्रवृत्ति मानकर 'स्वरयोरव्यवधाने प्रकृतिभावो लोपो वैकस्य।'[2] इस सूत्र के अनुसार 'अरिहंताणं' वाले पद के 'अ' का लोप विकल्प से हो जाता है अतः इस पद में 6 ही स्वर माने जाते हैं। अतः मंत्र में कुल 35 अक्षर होने पर भी 34 ही स्वर माने जाते हैं। इनमें जो द्धा, ज्झा, व्व से संयुक्ताक्षर हैं, उनमें से एक-एक व्यंजन लेने से 30 व्यंजन होते हैं। इस प्रकार से कुल स्वर और व्यंजनों की संख्या 34+30=64 है। मूल वर्णों की संख्या भी 64 ही है। प्राकृत भाषा के नियमानुसार अ, इ, उ और ए मूल स्वर तथा ज झ ण त द ध य र ल व स और ह ये मूल व्यंजन इस मंत्र में निहित हैं। अतएव 64 अनादि मूलवर्णों को लेकर समस्त श्रुत-ज्ञान के अक्षरों का प्रमाण निम्न प्रकार निकाला जा सकता है। गाथा सूत्र निम्न प्रकार है–

चउसट्ठिपदं विरलिय दुगं च दाऊण संगुणं किच्चा।
रूऊणं च कए पुण सुदणाणस्सक्खरा होंति।।

अर्थ–उक्त चौंसठ अक्षरों का विरलन करके प्रत्येक के ऊपर दो का अंक देकर परस्पर सम्पूर्ण दो के अंकों का गुणा करने से लब्ध राशि में एक घटा देने से जो प्रमाण रहता है, उतने ही श्रुतज्ञान के अक्षर होते हैं।

इस नियम से गुणाकार करने पर–

एकट्ठ च च य छस्सत्तयं च च य सुण्णसत्ततियसत्ता।
सुण्णं णव पण पंच य एक्कं छक्केक्कगो य पणयं च।।

अर्थात् एक आठ चार-चार-छह-सात-चार-चार-शून्य-सात-तीन-सात-शून्य-नौ-पाँच-पाँच-एक-छह-एक-पाँच, यह संख्या आती है। इस गाथा सूत्र के अनुसार 18446744073709551615 ये समस्त श्रुतज्ञान के अक्षर होते हैं।

इस प्रकार णमोकार मंत्र में समस्त श्रुतज्ञान के अक्षर निहित हैं, क्योंकि अनादिनिधन मूलाक्षरों पर से ही उक्त प्रमाण निकाला गया है अतः संक्षेप में समस्त जिनवाणीरूप यह मंत्र है। इसका पाठ या स्मरण करने से कितना महान् पुण्य का बंध होता है तथा केवलज्ञान लक्ष्मी की प्राप्ति भी इस मंत्र की

आराधना से होती है। ज्ञानार्णव में श्री शुभचन्द्राचार्य ने इस मंत्र की आराधना को बताते हुए लिखा है–

"इस लोक में जितने भी योगियों ने मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त किया है, उन सबने श्रुतज्ञानभूत इस महामंत्र की आराधना करके ही प्राप्त किया है। इस महामंत्र का प्रभाव योगियों के अगोचर है। फिर भी जो इसके महत्व से अनभिज्ञ होकर वर्णन करना चाहता है, मैं समझता हूँ कि वह वायुरोग से व्याप्त होकर ही बक रहा है। पापरूपी पंक से संयुत भी जीव यदि शुद्ध हुए हैं, तो इस मंत्र के प्रभाव से ही शुद्ध हुए हैं। मनीषीजन भी मंत्र के प्रभाव से ही संसार के क्लेश से छूटते हैं।"[1]

इसलिए इस महामंत्र की महिमा को अचिन्त्य ही समझना चाहिए।

1. श्रियमात्यन्तिकीं प्राप्ता योगिनो येऽत्र केचन। अमुमेव महामंत्रं, सु समाराध्य केवलम्।। (ज्ञानार्णव) मंगलमंत्र णमोकार : एक अनुचिंतन पुस्तक के आधार से।

णमोकार महामंत्र पूजा

रचयित्री-गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

–स्थापना (गीता छंद) –

अनुपम अनादि अनंत है, यह मंत्रराज महान है।
सब मंगलों में प्रथम मंगल, करत अघ की हान है।।
अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक, साधुओं की वंदना।
इन शब्दमय परब्रह्म को, थापूँ करूँ नित अर्चना।।1।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टक (भुजंगप्रयात छंद) –

महातीर्थ गंगानदी नीर लाऊँ।
महामंत्र की नित्य पूजा रचाऊँ।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादिचंदन महागंध लाके।
परं शब्द ब्रह्मा की पूजा रचाके।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।2।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पयोसिंधु के फेन सम अक्षतों को।
लिया थाल में पुँज से पूजने को।।

णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।3।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही कुंद अरविंद मंदार माला।
चढ़ाऊँ तुम्हें काम को मार डाला।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।4।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीतिस्वाहा।

कलाकंद लड्डू इमरती बनाऊँ।
तुम्हें पूजते भूख व्याधी नशाऊँ।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।5।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीतिस्वाहा।

शिखा दीप की ज्योति विस्तारती है।
महामोह अंधेर संहारती है।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।6।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीतिस्वाहा।

सुगंधी बढ़े धूप खेते अगनि में।
सभी कर्म की भस्म हो एक क्षण में।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।7।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास अंगूर अमरूद लाया।
महामोक्षसंपत्ति हेतू चढ़ाया।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।8।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीतिस्वाहा।

उदक गंध आदि मिला अर्घ्य लाया।
महामंत्र नवकार को मैं चढ़ाया।।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं।
महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं।।9।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

–दोहा–

शांतीधारा मैं करूँ, तिहुँ जग शांती हेत।
भव-भव आतप शांत हो, पूजूँ भक्ति समेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मल्लिका पुष्प ले, पूजूँ मंत्र महान।
पुष्पांजलि से पूजते, सकलसौख्य वरदान।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं। ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं। ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं। ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं।**

(108 सुगंधित श्वेत पुष्पों से या लवंग अथवा पीले तंदुलों से जाप्य करना)

जयमाला

–सोरठा–

पंचपरमगुरुदेव, नमूँ नमूँ नत शीश मैं।
करो अमंगल छेव, गाऊँ तुम गुणमालिका।।1।।

चाल –हे दीनबंधु.....

जैवंत महामंत्र मूर्तिमंत धरा में।
जैवंत परमब्रह्म शब्दब्रह्म धरा में।।
जैवंत सर्वमंगलों में मंगलीक हो।
जैवंत सर्वलोक में तुम सर्वश्रेष्ठ हो।।1।।

त्रैलोक्य में हो एक तुम्हीं शरण हमारे।
माँ शारदा भी नित्य ही तुम कीर्ति उचारे।।

विघ्नों का नाश होता है तुम नाम जाप से।
सम्पूर्ण उपद्रव नशे हैं तुम प्रताप से।।2।।

छ्यालीस सुगुण को धरें अरिहंत जिनेशा।
सब दोष अट्ठारह से रहित त्रिजग महेशा।।
ये घातिया को घात के परमात्मा हुए।
सर्वज्ञ वीतराग औ निर्दोष गुरु हुए।।3।।

जो अष्ट कर्म नाश के ही सिद्ध हुए हैं।
वे अष्ट गुणों से सदा विशिष्ट हुए हैं।।
लोकाग्र में हैं राजते वे सिद्ध अनन्ता।
सर्वार्थसिद्धि देते हैं वे सिद्ध महन्ता।।4।।

छत्तीस गुण को धारते आचार्य हमारे।
चउसंघ के नायक हमें भवसिंधु से तारें।।
पच्चीस गुणों युक्त उपाध्याय कहाते।
भव्यों को मोक्षमार्ग का उपदेश पढ़ाते।।5।।

जो साधु अट्ठाईस मूलगुण को धारते।
वे आत्म साधना से साधु नाम धारते।।
ये पंचपरमदेव भूतकाल में हुए।
होते हैं वर्तमान में भी पंचगुरु ये।।6।।

होंगे भविष्य काल में भी सुगुरु अनन्ते।
ये तीन लोक तीन काल के हैं अनन्ते।।
इन सब अनन्तानन्त की मैं वंदना करूँ।
शिवपथ के विघ्न पर्वतों की खण्डना करूँ।।7।।

इक ओर तराजू पे अखिल गुण को चढ़ाऊँ।
इक ओर महामंत्र अक्षरों को धराऊँ।।
इस मंत्र के पलड़े को उठा ना सके कोई।
महिमा अनन्त यह धरे ना इस सदृश कोई।।8।।

इस मंत्र के प्रभाव श्वान देव हो गया।
इस मंत्र से अनन्त का उद्धार हो गया।।
इस मंत्र की महिमा को कोई गा नहीं सके।
इसमें अनन्त शक्ति पार पा नहीं सके।।9।।

पाँचों पदों से युक्त मंत्र सारभूत है।
पैंतीस अक्षरों से मंत्र परमपूत है।।
पैंतीस अक्षरों के जो पैंतीस व्रत करें।
उपवास या एकाशना से सौख्य को भरें।।10।।

तिथि सप्तमी के सात पंचमी के पाँच हैं।
चौदश के चौदह नवमी के भी नव विख्यात हैं।।
इस विध से महामंत्र की आराधना करें।
वे मुक्ति वल्लभापती निज कामना वरें।।11।।

–दोहा–

यह विष को अमृत करे, भव-भव पाप विदूर।
पूर्ण ''ज्ञानमति'' हेतु मैं, जजूँ भरो सुख पूर।।12।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधन-पंचनमस्कारमंत्राय जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–सोरठा–

मंत्रराज सुखकार, आतम अनुभव देत है।
जो पूजें रुचिधार, स्वर्ग मोक्ष के सुख लहें।।13।।

।।इत्याशीर्वादः।।

णमोकार मंत्र का माहात्म्य

(श्री उमास्वामि आचार्यविरचित)

हिन्दी पद्यानुवाद-आर्यिका चंदनामती

विष्लिष्यन् घनकर्मराशिमशनिः संसारभूमीभृतः।
स्वर्निर्वाणपुरप्रवेशगमने, निःप्रत्यवायः सतां।।
मोहांधावटसंकटे निपततां, हस्तावलम्बोर्हतां।
पायान्नः स चराचरस्य जगतः संजीवनं मन्त्रराट्।।1।।

(1)

णमोकार यह मंत्रराज, घनकर्म समूह हटाता है।
यह संसार महापर्वत, भेदन में वज्र कहाता है।।
सत्पुरुषों को स्वर्ग मोक्ष दे, संकट दूर भगाता है।
मोह महान्धकूप में डूबे, को अवलम्बन दाता है।।

दोहा – **जीवनदाता मंत्र यह, करे जगत उद्धार।**
मेरी भी रक्षा करो, णमोकार सुखकार।।

अर्थ–अर्हन्त आदि पंचपरमेष्ठियों का वाचक णमोकार मंत्रराज ज्ञानावरण आदि कर्म समूह को आत्मा से हटाने वाला है, अतएव संसाररूपी पर्वत को तोड़ने के लिए वज्र के समान है। सत्पुरुषों को स्वर्ग-मोक्ष जाने में सहायक है, मोहरूपी अंधकूप में गिरे हुए प्राणियों को उससे बाहर निकालने के लिए हस्तावलम्बन (हाथ के सहारे) के समान है, चर (त्रस) और अचर (पृथ्वी, वनस्पति आदि स्थावर) जगत को जीवन दाता है, ऐसा यह णमोकार महामंत्र हमारी रक्षा करे।

एकत्र पंचगुरुमंत्रपदाक्षराणि,
विश्वत्रयं-पुनरनन्तगुणं परत्र।
यो धारयेत्किल तुलानुगतं तथापि,
वंदे महागुरुतरं परमेष्ठिमन्त्रं।।2।।

(2)

एक तराजू के पलड़े पर, णमोकारपद मंत्र रखो।
लोकत्रय के गुण अनन्त, पुंजों को भी इक ओर रखो।।
परमेष्ठी के मंत्रों का, फिर भी पलड़ा भारी होगा।
गौरवशाली महामंत्र को, नमन करूँ शिवसुख देगा।।

दोहा – **णमोकार यह मंत्र है, जग में गुरुतर मंत्र।**
नमूँ इसे सर्वत्र मैं, पाऊँ सौख्य स्वतंत्र।।

अर्थ – यदि कोई व्यक्ति तराजू में एक ओर पंचपरमेष्ठी के णमोकार मंत्र के पद – अक्षरों को और दूसरी ओर अनंत गुणात्मक तीन लोकों को रखकर तुलना करे, तो भी वह णमोकार मंत्र को अधिक वजनदान (भारी) अनुभव करेगा, उस महान गौरवशाली णमोकार मंत्र को मैं नमस्कार करता हूँ।

ये केचनापि सुषमाद्यरका अनंता,
उत्सर्पिणीप्रभृतयः प्रययुर्विवर्त्ताः।
तेष्वप्ययं परतरं प्रथितं पुरापि,
लब्ध्वैनमेव हि गताः शिवमत्र लोकाः।।3।।

(3)

उत्सर्पिणि अवसर्पिणी के, सुषमादिक काल अनन्त रहे।
णमोकार यह महामंत्र ही, हुआ प्रसिद्ध सदा उनमें।।
काल अनादी से अनन्त तक, मंत्रराज यह शाश्वत है।
भव से पार मुक्ति हेतू, वंदन कर लूँ भव सार्थक है।।

दोहा – **अपराजित यह मंत्र है, पंचपदों से युक्त।**
अंजन तस्कर हो गया, इसके बल पर मुक्त।।

अर्थ – उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी आदि काल के जो सुषमा, दुःषमा आदि अनन्त युग पहले व्यतीत हो चुके हैं, उनमें भी यह णमोकार मंत्र सबसे अधिक महत्त्वशाली प्रसिद्ध हुआ है। मैं संसार से बहिर्भूत (बाहर) मोक्ष प्राप्त करने के लिए उस णमोकार मंत्र को नमस्कार करता हूँ।

उत्तिष्ठन्निपतञ्चलन्नपि धरा-पीठे लुठन् वा स्मरेत्-
जाग्रद्वा प्रहसन् स्वपन्नपि वने विभ्यन्निषीदन्नपि।

गच्छन् वर्त्मनि वेश्मनि प्रतिपदं, कर्म प्रकुर्वन्नपि
यः पंचप्रभुमंत्रमेकमनिशं किं तस्य नो वांछितम्।।4।।

(4)

जो नर इस णमोकार मंत्र को, सदा-सदा स्मरण करे।
उठते-गिरते-चलते-पृथ्वी, पर भी लुढ़कते मन में धरे।।
जगते-सोते-हंसते अथवा, वन में भी जब डर लगता।
मंत्रराज को जपने से हर, मन वांछित फल है मिलता।।

दोहा – **मूलमंत्र जिनधर्म का, पढ़ो करो नित जाप।**
देखो ग्वाला भी हुआ, सेठ सुदर्शनराज।।

अर्थ – जो व्यक्ति उठते हुए, गिरते हुए, चलते हुए, पृथ्वी तल पर लोटते – लुढ़कते हुए, जागते हुए, सोते हुए, हंसते हुए, वन में डरते हुए, बैठते, मार्ग में चलते, घर में रहते व कोई कार्य करते हुए पग-पग पर सदा णमोकार मंत्र का स्मरण करता है, उसकी सभी इच्छा पूर्ण होती हैं।

संग्रामसागरकरीन्द्रभुजंगसिंह-
दुर्व्याधिवन्हिरिपुबंधनसंभवानि।
चौरग्रहभ्रमनिशाचरशाकिनीनां
नश्यन्ति पंचपरमेष्ठिपदैर्भयानि।।5।।

(5)

युद्धक्षेत्र में या समुद्र में, मृत्यु सामने दिखती हो।
हाथी-सर्प-सिंह-दुर्व्याधि, तन में या अग्नी भी हो।।
शत्रु तथा बंधन एवं, चौरादि दुष्ट ग्रह दुख देते।
शाकिनि डाकिनि आदिकभय, परमेष्ठि पाँच सब हर लेते।।

दोहा – **इसी मंत्र के श्रवण से, श्वान हुआ यक्षेन्द्र।**
पठन श्रवण और नमन से, निज मन करोपवित्र।।

अर्थ – णमोकार मंत्र जपने से युद्ध, समुद्र, गजराज (हाथी) सर्प, सिंह, भयानक रोग, अग्नि, शत्रु, बंधन (जेल आदि) के तथा चोर, दुष्टग्रह, राक्षस चुड़ैल आदि का भय दूर हो जाता है।

यो लक्षं जिनलक्षबद्धहृदयः, सुव्यक्तवर्णक्रमम्।
श्रद्धावान्विजितेन्द्रियो भवहरं, मन्त्रं जपेच्छ्रावकः।।
पुष्पैः श्वेतसुगन्धिभिः सुविधिना, लक्षप्रमाणैरमुम्।
यः संपूजयते स विश्वमहितस्तीर्थाधिनाथो भवेत्।।6।।

(6)

जो श्रद्धालु जितेन्द्रिय श्रावक मन में प्रभु सुमिरन करके।
शुद्ध शब्द उच्चारणपूर्वक णमोकार का जप करते।।
एक लक्ष मंत्रों को जपकर पुष्प सफेद चढ़ाते हैं।
णमोकार पूजन से वे तीर्थाधिनाथ बन जाते हैं।।

दोहा – **श्वेत सुगंधित पुष्प ले, पूजूँ मंत्र महान।**
जगत्पूज्य पद प्राप्त कर, बन जाऊँ भगवान।।

अर्थ – जो जितेन्द्रिय श्रद्धालु श्रावक हृदय में जिनेन्द्र भगवान का लक्ष्य रखकर स्पष्ट शुद्ध उच्चारण सहित णमोकार मंत्र को एक लाख बार जपता है तथा विधिपूर्वक एक लाख सुगंधित सफेद फूलों से णमोकार मंत्र को पूजता है। अर्थात् णमोकार मंत्र शुद्ध स्पष्ट पढ़कर सुगंधित सफेद फूल चढ़ाता जाता है, वह जगत्पूज्य तीर्थंकर पद प्राप्त करता है।

इन्दुर्दिवाकरतया रविरिंदुरूपः,
पातालमंबरमिला सुरलोक एव।
किं जल्पितेन बहुना भुवनत्रयेपि,
यन्नाम तन्न विषमं च समं च तस्मात्।।7।।

(7)

णमोकार के मंत्र नाम से, चन्द्र सूर्य सम बन सकता।
शशि सम सूरज बने तथा, पाताल भी नभ सम बन सकता।।
धरती स्वर्ग समान सुखद बन, इच्छित फल दे सकती है।
और कहें क्या ? तीन लोक की, हर वस्तू मिल सकती है।।

दोहा – **सुखदायक इस मंत्र से, मिलते सभी पदार्थ।**
दुख भी सुख में बदलते, प्राणी होंय कृतार्थ।।

अर्थ – णमोकार मंत्र के प्रभाव से चन्द्रमा सूर्य के समान, सूर्य चन्द्रमा की तरह, पाताल आकाश के समान और पृथ्वी स्वर्ग के समान हो जाती है। बहुत क्या कहें ? तीन लोक में ऐसी कोई भी विषम (दुखदायक–अनिष्ट) वस्तु नहीं है जो णमोकार मंत्र के प्रभाव से सम (सुखदायक–इष्ट) न हो सके। अर्थात् सभी अनिष्ट वस्तुएँ णमोकार मंत्र के प्रभाव से इष्टरूप परिवर्तित हो सकती हैं।

जग्मुर्जिनास्तदपवर्गपदं तदैव,
विश्वं वराकमिदमत्र कथं विनास्मान्।
तत्सर्वलोकभुवनोद्धरणाय धीरैः-
मंत्रात्मकं निजवपुर्निहितं तदत्र।।8।।

(8)

धीर वीर जिनवर ने तब ही, शीघ्र मुक्ति पद प्राप्त किया।
जब निज तन को मंत्ररूप कर, आत्म तत्त्व में रमा लिया।।
त्रिभुवन के उद्धार हेतु जो, परमेष्ठी का ध्यान करें।
वे ही जग में क्रम-क्रम से, परमेष्ठी बन विश्राम करें।।

दोहा – **परमेष्ठी पद प्राप्ति का, यही मूल आधार।**
णमोकार का ध्यान ही, करता भव से पार।।

अर्थ – कषाय विजेता योगी तब ही मुक्ति पद प्राप्त कर सके, जबकि उन धीर वीरों ने समस्त जगत का उद्धार करने के लिए अपना शरीर मंत्ररूप कर लिया। इसके बिना बेचारा संसार (संसारी जीव समूह) किस तरह कल्याण प्राप्त करता। यानी साधु आदि परमेष्ठी णमोकार मंत्र के ध्यान से मुक्त होते हैं तथा उनका पाँच परमेष्ठीरूप होना इस णमोकार मंत्र का मूल आधार है।

हिंसाविननृतप्रियः परधनं हर्त्ता परस्त्रीरतः।
किंचान्येष्वपि लोकगर्हितमतिः पापेषु गाढोद्यतः।।
मन्त्रेशं सपदि स्मरेच्च सततं, प्राणात्यये सर्वदा।
दुःकर्माहितदुर्गतिक्षतचयः स्वर्गी भवेन्मानवः।।9।।

(9)

जो नर हिंसा झूठ व चोरी, तथा परस्त्री में रत है।
लोक निंद्य होकर महान, पापों में रहता तत्पर है।।

वह भी उन्हें तज यदी कदाचित्, मंत्रराज सुमिरन कर ले।
तो कुकर्म से अर्जित दुर्गति, बंध बदल दिवगति वर ले।।

दोहा – **णमोकार मंत्रेश यह, कुगति निवारक जान।**
सुगति प्रदाता है इसे, शत शत करो प्रणाम।।

अर्थ–जो मनुष्य हिंसा, असत्य भाषण, चोरी, परस्त्री सेवन करने वाला हो तथा लोकनिन्दित होकर अन्य महान पाप कर्मों में तत्पर रहता हो, वह भी यदि (पापों को छोड़कर) निरन्तर– सदा णमोकार मंत्र का स्मरण करता रहे, तो कुकर्मों से उपार्जित अपनी नरक आदि दुर्गति को बदल कर मरने पर देवगति प्राप्त करता है।

अयं धर्मः श्रेयान्नयमपि च देवो जिनपति-
र्व्रतं चैष श्रीमान्नयमपि तपः सर्वफलदं।
किमन्यैर्वाग्जालैर्बहुभिरपि संसारजलधौ,
नमस्कारात्तत्किं यदिह शुभरूपो न भवति।।10।।

(10)

नमस्कार यह मंत्र जगत में, सर्व हितैषी धर्म कहा।
यही मंत्र जिनरूप व व्रतमय फलदायक शिवशर्म कहा।।
अधिक कथन से क्या मतलब है, केवल सार समझ लीजे।
इसी मंत्र की महिमा से हर अशुभ कार्य भी शुभ कीजे।।

दोहा – **है अचिन्त्य महिमामयी, णमोकार यह मंत्र।**
इसको जपते ही मिलें, भौतिक सौख्य असंख्य।।

अर्थ–यह पंचनमस्कार मंत्र ही कल्याणकारी धर्म है, यह मंत्र ही जिनेन्द्र भगवानरूप है, यह मंत्र ही समस्त शुभ फलदायक व्रतरूप है। दूसरी बहुत सी बातें करने से क्या लाभ है। संक्षेप में यों समझ लीजिए कि संसार में यह णमोकार मंत्र ऐसा महत्वशाली है, जिसके प्रभाव से ऐसी कोई चीज नहीं, जो शुभरूप न हो सके।

स्वपन् जाग्रत्तिष्ठन्नथ पथि चलन् वेश्मनि स्खलन्।
भ्रमन् क्लिश्यन् माद्यन् वनगिरि-समुद्रेष्ववतरन्।।

नमस्कारान् पंच स्मृतिखनिनिखातानिव सदा।
प्रशस्तौ विन्यस्तान्निव वहति यः सोत्र सुकृतिः।।11।।

(11)

जो मनुष्य सोते जगते, पथ में चलते यह मंत्र पढ़ें।
घर में भी स्खलन समय, इस मंत्रराज को सदा पढ़ें।।
भ्रमण-खिन्न-उन्मत्त अवस्था, वन पर्वत या सागर हो।
हृदय पटल में णमोकार यह, मंत्र ही सदा उजागर हो।।

दोहा – **पत्थर पर उत्कीर्ण सम, धरो हृदय में मंत्र।**
पुण्यवान मानव जनम, पाकर बनो स्वतंत्र।।

अर्थ–जो मनुष्य सोते, जागते, मार्ग में चलते, घर में लड़खड़ाते, घूमते, खेदखिन्न होते, उन्मत्त होते, वन पर्वत में चलते, समुद्र में तैरते हुए, यानी प्रत्येक दशा में पंच नमस्कार मंत्र को अपने हृदय पटल पर (स्मृति में) पाषाण प्रशस्ति में उत्कीर्ण (खुदे हुए) अक्षरों के समान धारण किए रहता है, वह पुण्यवान है।

दुःखे सुखे भयस्थाने, पथि दुर्गे रणेपि वा।
श्रीपंचगुरुमन्त्रस्य, पाठः कार्यः पदे पदे।।12।।

अर्थ–मनुष्य को दुख में, सुख में, भयभीत स्थान में, मार्ग में, वन में युद्ध में पग-पग पर पंचनमस्कार मंत्र का पाठ करना चाहिए।

(12)

दोहा – **दुख-सुख भयप्रद मार्ग या, वन हो युद्धस्थान।**
पंचनमस्कृति मंत्र को, पढ़ो लहो सुखखान।।
णमोकार माहात्म्य यह, उमास्वामिकृत स्तोत्र।
उसका ही अनुवाद यह, पढ़ो लहो सुखस्रोत।।1।।
ज्ञानमती गणिनीप्रमुख, मात जगतविख्यात।
उनकी शिष्या चन्दना-मती आर्यिका मात।।2।।
किया पद्य अनुवाद यह, गुरु आज्ञा सिर धार।
भौतिक आत्मिक सुख मिलें, पढ़ो मंत्र हितकार।।3।।

णमोकार चालीसा

-दोहा-

वंदूँ श्री अरिहंत पद, सिद्ध नाम सुखकार।
सूरी पाठक साधुगण, हैं जग के आधार।।1।।

इन पाँचों परमेष्ठि से, सहित मूल यह मंत्र।
अपराजित व अनादि है, णमोकार शुभ मंत्र।।2।।

णमोकार महामंत्र को, नमन करूँ शतबार।
चालीसा पढ़कर लहूँ, स्वात्मधाम साकार।।3।।

-चौपाई-

हो जैवन्त अनादिमंत्रम्, णमोकार अपराजित मंत्रम् ।।1।।
पंच पदों से युक्त सुयंत्रम्, सर्वमनोरथ सिद्धि सुतंत्रम्।।2।।
पैंतिस अक्षर माने इसमें, अड्डावन मात्राएँ भी हैं।।3।।
अतिशयकारी मंत्र जगत में, सब मंगल में कहा प्रथम है।।4॥
जिसने इसका ध्यान लगाया, मनमन्दिर में इसे बिठाया।।5।।
उसका बेड़ा पार हो गया, भवदधि से उद्धार हो गया।।6।।
अंजन बना निरन्जन क्षण में, शूली बदली सिंहासन में।।7।।
नाग बना फूलों की माला, हो गई शीतल अग्नी ज्वाला।।8।।
जीवन्धर से इसी मंत्र को, सुना श्वान ने मरणासन्न हो।।9।।
शांतभाव से काया तजकर, पाया पद यक्षेन्द्र हुआ तब।।10।।
एक बैल ने मंत्र सुना था, राजघराने में जन्मा था।11।।
जातिस्मरण हुआ जब उसको, उसने खोजा उपकारी को।।12।।
पद्मरुची को गले लगाया, आगे मैत्री भाव निभाया।।13।।
कालान्तर में वही पद्मरुचि, राम बने तब बहुत धर्मरुचि।।14।।
बैल बना सुग्रीव बन्धुवर! दोनों के सम्बन्ध मित्रवर।।15।।

रामायण की सत्य कथा है, णमोकार से मिटी व्यथा है।।16।।
ऐसी ही कितनी घटनाएँ, नए पुराने ग्रन्थ बताएँ।।17।।
इसीलिए इस मंत्र की महिमा, कही सभी ने इसकी गरिमा।।18॥
हो अपवित्र पवित्र दशा में, सदा करें संस्मरण हृदय में।।19।।
जपें शुद्धतन से जो माला, वे पाते हैं सौख्य निराला।।20।।
अन्तर्मन पावन होता है, बाहर का अघमल धोता है।।21।।
णमोकार के पैंतिस व्रत हैं, श्रावक करते श्रद्धायुत हैं।।22।।
हर घर के दरवाजे पर तुम, महामंत्र को लिखो जैनगण।।23।।
जैनी संस्कृति दर्शाएगा, सुख समृद्धि भी दिलवाएगा।।24।।
एक तराजू के पलड़े पर, सारे गुण भी रख देने पर।।25।।
दूजा पलड़ा मंत्र सहित जो, उठा न पाए कोई उसको।।26।।
उठते चलते सभी क्षणों में, जंगल पर्वत या महलों में।।27।।
महामंत्र को कभी न छोड़ो, सदा इसी से नाता जोड़ो।।28।।
देखो! इक सुभौम चक्री था, उसने मन में इसे जपा था।।29।।
देव मार नहिं पाया उसको, तब छल युक्ति बताई नृप को।।30।।
उसके चंगुल में फंस करके, लिखा मंत्र राजा ने जल में।।31।।
ज्यों ही उस पर कदम रख दिया, देव की शक्ती प्रगट कर दिया।।32।।
देव ने उसको मार गिराया, नरक धरा को नृप ने पाया।।33।।
मंत्र का यह अपमान कथानक, सचमुच ही है हृदय विदारक।।34।।
भावों से भी न अविनय करना, सदा मंत्र पर श्रद्धा करना।।35।।
इसके लेखन में भी फल है, हाथ नेत्र हो जाएं सफल है।।36।।
णमोकार की बैंक खुली है, ज्ञानमती प्रेरणा मिली है।।37।।
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में, मंत्रों का व्यापक संग्रह है।।38।।
इसकी किरण प्रभा से जग में, फैले सुख शांती जन-जन में।।39।।
मन-वच-तन से इसे नमन है, महामंत्र का करूं स्मरण मैं।।40॥

-शंभु छंद-

यह महामंत्र का चालीसा, जो चालिस दिन तक पढ़ते हैं।
ॐ अथवा असिआउसा मंत्र, या पूर्ण मंत्र जो जपते हैं।।
ॐकारमयी दिव्यध्वनि के, वे इक दिन स्वामी बनते हैं।
परमेष्ठी पद को पाकर वे, खुद णमोकारमय बनते हैं।।1।।
पच्चिस सौ बाइस वीर अब्द, आश्विन शुक्ला एकम तिथि में।
रच दिया ज्ञानमति गणिनी की, शिष्या ''चन्दनामती'' मैंने।।
मैं भी परमेष्ठी पद पाऊँ, प्रभु कब ऐसा दिन आएगा।
जब मेरा मन अन्तर्मन में, रमकर पावन बन जाएगा।।2।।

भजन

-आर्यिका चंदनामती

–शिखरिणी छंद–

णमो अरिहंताणं, नमन है अरिहंत प्रभु को।
णमो सिद्धाणं में, नमन कर लूँ सिद्ध प्रभु को।।
णमो आइरियाणं, नमन है आचार्य गुरु को।
णमो उवज्झायाणं, नमन है उपाध्याय गुरु को।।।1।।
णमो लोए सव्व-साहूणं पद बताता।
नमन जग के सब, साधुओं को करूँ जो हैं त्राता।।
परमपद में स्थित, कहें पाँच परमेष्ठि इनको।
नमन इनको करके, लहूँ इक दिन मुक्तिपद को।।2।।
सभी के पापों को, शमन करता मंत्र यह ही।
तभी सब मंगल में, प्रथम माना मंत्र यह ही।।
जपें जो भी इसको, वचन मन कर शुद्ध प्रणति।
लहें वे इच्छित फल, हृदय नत हो 'चन्दनामति'।।3।।

भजन

-आर्यिका चंदनामती

तर्ज–गहरी-गहरी नदियाँ.....

सनावद में णमोकार धाम तीर्थ प्यारा है।
गूँजे जहाँ णमोकार मंत्र का जयकारा है।।

सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र निकट धाम है।
कई साधु सन्तों का जनम स्थान है।।
देव शास्त्र गुरु भक्ति का जिन्हें सहारा है।
गूँजे जहाँ णमोकार मंत्र का जयकारा है।।1।।

ज्ञानमती माताजी के शिष्य जो प्रसिद्ध हैं।
गुरुवर मोतीसागर यहाँ के प्रथम आदर्श हैं।।
उनकी प्रेरणा से ये प्रकाश फैला प्यारा है।
गूँजे जहाँ णमोकार मंत्र का जयकारा है।।2।।

पंचपरमेष्ठियों की मूर्ति जहाँ राजतीं।
णमोकार मंत्र की पंक्तियाँ विराजतीं।।
''चन्दनामती'' ये तीर्थ पहला ही निराला है।
गूँजे जहाँ णमोकार मंत्र का जयकारा है।।3।।

भजन

-आर्यिका चंदनामती

तर्ज - जरा सामने तो आओ.....

णमोकार धाम तीरथ महान है, पंचपरमेष्ठी का जो धाम है।
सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र के निकट, सनावद में बना पुण्यधाम है।।

काल अनादी से जिनधर्म का, मूलमंत्र णमोकार ही है।
अपराजित उस मंत्र की महिमा, बतलाते सब शास्त्र भी है।।
उसी मंत्र का जहाँ गुणगान है, ऋषभदेव जी की प्रतिमा महान है।
सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र के निकट, सनावद में बना पुण्य धाम है।।1।।

गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी से यह योजना मिली।
मोतीसागर जी की प्रेरणा मूर्तरूप में यहाँ फली।।
जहाँ सुन्दर बना उद्यान है, शुभ भावों का जो स्थान है।
सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र के निकट, सनावद में बना पुण्यधाम है।।2।।

णमोकार के पैंतिस अक्षर, पाँच हैं पद साकार जहाँ।
वही ''चंदनामती'' पंच-परमेष्ठी पावन धाम कहा।।
ऐसे तीरथ को मेरा प्रणाम है, युग-युग तक रहे इसका नाम है।
सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र के निकट, सनावद में बना पुण्यधाम है।।3।।

भजन

-आर्यिका चंदनामती

तर्ज–पंखिड़ा तू उड़के जाना.....

वंदना करूँ मैं णमोकार धाम की।
पंचपरमदेव महामंत्र नाम की।।
वंदना.....वंदना....।।टेक.।।

जैसे जैनधर्म विश्व में अनादिनिधन है।
महामंत्र णमोकार भी अनादिनिधन है।।
मन से जपो तन से जपो प्रभू नाम ही।
पंचपरमदेव महामंत्र नाम की।।
वंदना.....वंदना....।।1।।

पाँच पद तथा पैंतीस अक्षरों का मंत्र है।
इसमें राजतीं परमेष्ठियों की मूर्ति पंच हैं।।
मन से जपो तन से जपो प्रभू नाम ही।
पंचपरमदेव महामंत्र नाम की।।
वंदना.....वंदना....।।2।।

गणिनी ज्ञानमती माताजी से योजना मिली।
पीठाधीश मोतीसागर जी की प्रेरणा मिली।।
मन से जपो तन से जपो प्रभू नाम ही।
पंचपरमदेव महामंत्र नाम की।।
वंदना.....वंदना....।।3।।

णमोकार धाम नामके इस तीर्थ को नमन।
'चन्दनामती' करो प्रभू की कीर्ति को नमन।।
मन से जपो तन से जपो प्रभू नाम ही।
पंचपरमदेव महामंत्र नाम की।।
वंदना.....वंदना....।।4।।

भजन

-आर्यिका चंदनामती

तर्ज-तन डोले.....

णमोकार बोलो, फिर आँख खोलो, सब कार्य सिद्ध हो जाएँगे,
नर जन्म सफल हो जाएगा।।

प्रातःकाल उषा बेला में, बोलो मंगल वाणी।
हर घर में खुशियाँ छाएँगी, होगी नई दिवाली।। रे भाई.....
प्रभु नाम बोलो, निजधाम खोलो, सब कार्य सिद्ध हो जाएँगे,
नर जन्म सफल हो जाएगा।।1।।

परमब्रह्म परमेष्ठी की शक्ती, यह मंत्र बताता।
णमोकार के उच्चारण से, अन्तर्मन जग जाता।। रे भाई.....
नौ बार बोलो, सौ बार बोलो, सब कार्य सिद्ध हो जाएँगे,
नर जन्म सफल हो जाएगा।।2।।

ॐ शब्द का ध्यान ''चन्दना'' मन को स्वस्थ बनाता।
इसके ध्यान से मानव इक दिन, परमेष्ठी पद पाता।। रे भाई....
नौ बार बोलो, सौ बार बोलो, सब कार्य सिद्ध हो जाएँगे,
नर जन्म सफल हो जाएगा।।3।।

आरती

-आर्यिका चंदनामती

तर्ज-माई रे माई.....

णमोकार महामंत्रराज की आरति करने आये।
पाँचों परमेष्ठी का वन्दन, पुण्यधाम दिलवाये।।
जय हो मंत्रराज की जय, जय णमोकार धाम की जय।

पंचपदी णमोकार मंत्र में, पाँचों परमेष्ठी हैं।
अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय साधु उन्हें कहते हैं।।
परमोत्तम पद में स्थित ये, परमेष्ठी कहलाये।
पाँचों परमेष्ठी का वन्दन, पुण्यधाम दिलवाये।।
जय हो मंत्रराज की जय, जय णमोकार धाम की जय।।1।।

णमोकार महामंत्र में पैंतिस अक्षर माने जाते।
अड्ठावन मात्रा स्वर-व्यंजन चौंसठ वर्ण हैं आते।।
द्वादशांग का बीजाक्षर यह, श्रुत का सार बताये।
पाँचों परमेष्ठी का वन्दन, पुण्यधाम दिलवाये।।
जय हो मंत्रराज की जय, जय णमोकार धाम की जय।।2।।

चौरासी लख मंत्रों का यह, मूल स्रोत कहलाता।
इसीलिए 'चन्दनामती', मातृका मंत्र कहलाता।।
घृत दीपक से आरति करके, आरत क्लेश नशाएँ।
पाँचों परमेष्ठी का वन्दन, पुण्यधाम दिलवाये।।
जय हो मंत्रराज की जय, जय णमोकार धाम की जय।।3।।

तीरथ है णमोकार धाम, इस धाम की महिमा न्यारी।
गणिनी ज्ञानमती अरु मोतीसागर की यह क्यारी।।
इसके नव प्रकाश से हम सब, आतम ज्योति जलायें।
पाँचों परमेष्ठी का वन्दन, पुण्यधाम दिलवाये।।
जय हो मंत्रराज की जय, जय णमोकार धाम की जय।।4।।

णमोकार धाम तीर्थ की योजना प्रदात्री
राष्ट्रगौरव, गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

भारत की वसुन्धरा सदैव से तपस्या, त्याग एवं संयम की भूमि रही है। भगवान ऋषभदेव, राम, महावीर की यह भूमि आज भी ऐसे महान व्यक्तित्वों से सुशोभित है कि जो अपने जीवनकाल में ही ऐतिहासिक व्यक्तित्व बन जाते हैं।

ऐसा ही एक महान व्यक्तित्व है– वर्तमान दिगम्बर जैन समाज की सबसे प्राचीन दीक्षित साध्वी-पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी। सन् 1934 में शरदपूर्णिमा के दिन जिला बाराबंकी (उ.प्र.) के टिकैतनगर ग्राम में माता मोहिनी एवं पिता श्री छोटेलाल जैन के दाम्पत्य जीवन के प्रथम पुष्प के रूप में कन्यारत्न 'मैना' का जन्म हुआ। छोटी-सी आयु में ही अपनी माँ की प्रेरणावश पद्मनंदिपंचविंशतिका ग्रंथ के स्वाध्याय द्वारा बालिका मैना ने अपने वैराग्य को भलीभाँति दृढ़ कर लिया और 18 वर्ष की अल्प आयु में शरदपूर्णिमा के दिन ही परिवार के प्रबल विरोध के बावजूद भी आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत एवं गृहत्याग के कठिन नियम धारण कर लिये। सन् 1953 में श्री महावीर जी (राज.) अतिशय क्षेत्र पर आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से आपने क्षुल्लिका दीक्षा लेकर 'वीरमती' नाम प्राप्त किया। पुनः 1956 में बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज की आज्ञानुसार उनके प्रथम पट्टाधीश आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज से माधोराजपुरा (राज.) में आपने आर्यिका दीक्षा लेकर 'ज्ञानमती' नाम प्राप्त किया। ज्ञान प्राप्ति हेतु अध्ययन-अध्यापन एवं स्वाध्याय के प्रति आपकी विशेष अभिरुचि देखकर ही गुरुवर ने आपको यह नाम प्रदान किया था। दीक्षा के प्रारंभिक वर्षों में आपने सर्वप्रथम संस्कृत व्याकरण एवं जैन आगम का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त किया तथा साथ ही सहस्रनाम मंत्रों की रचनापूर्वक अपनी लेखनी का शुभारंभ भी कर दिया।

सन् 1953 से साधनारत इन महान साध्वी ने अब तक 300 ग्रंथों का सृजन किया है। संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, कन्नड़ इत्यादि भाषाओं की प्रकाण्ड विदुषी पूज्य माताजी की काव्य प्रतिभा भी अद्वितीय है। जिनेन्द्र भक्ति के रस से भरे हुए अनेकों पूजन-विधानों की रचना पूज्य माताजी ने अपनी लेखनी द्वारा की है। सन् 1995 में डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय (फैजाबाद) ने पूज्य माताजी की विराट ज्ञान साधना को देखकर जैन इतिहास में प्रथम बार किसी साध्वी को 'डी.लिट्.' की मानद उपाधि प्रदान की।

कर्मठता, दृढ़संकल्प, अनुशासन के साथ-साथ वात्सल्य की प्रतिमूर्ति पूज्य माताजी की प्रेरणा से तीर्थंकरत्रय की जन्मभूमि हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.) में जैन भूगोल की अद्वितीय रचना- 'जम्बूद्वीप', तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं का विश्व में प्रथम बार निर्माण हुआ है।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग (इलाहाबाद)

में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ' का भव्य निर्माण भी पूज्य माताजी की सृजनशक्ति का ही सुन्दर प्रतिफल है। इसी प्रकार भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) में ''नंद्यावर्त महल'' तीर्थ का भव्य निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं ससंघ सानिध्य में मात्र 22 माह के अल्प अन्तराल में हुआ है।

लगभग 2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर की जो धरती अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के जन्मकल्याणक से महान उत्साह एवं हर्ष को प्राप्त हुई थी वह काल के थपेड़ों से भले ही उपेक्षित हो गयी थी, परन्तु जैन समाज के श्रद्धालुओं का वहाँ जाना हमेशा से जारी रहा और अब पूज्य ज्ञानमती माताजी के महान उपकार स्वरूप यह जन्मभूमि पुनः इस प्रकार जगमगा उठी है कि आने वाला भविष्य सदैव इसकी चमक से प्रभावित रहेगा।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ (1982) एवं भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ (1998) का देशव्यापी प्रवर्तन सम्पन्न हुआ एवं कुण्डलपुर से प्रवर्तित भगवान महावीर ज्योति रथ (2003) का प्रवर्तन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ है। इन रथों के द्वारा सम्पूर्ण भारत में अहिंसामयी सिद्धान्तों की व्यापक प्रभावना हुई।

शैक्षणिक क्षेत्र में अनेकानेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ-सेमिनार इत्यादि पूज्य माताजी की प्रेरणा द्वारा समय-समय पर सम्पन्न हुए हैं। इनके विराट व्यक्तित्व का अभिनंदन करने के लिए समाज ने इन्हें समय-समय पर युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, न्याय प्रभाकर, आर्यिकारत्न, गणिनीप्रमुख, युगनायिका, राष्ट्रगौरव, विश्वविभूति, वाग्देवी, सिद्धांतचक्रेश्वरी आदि उपाधियों से सम्मानित करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया है। वर्तमान में महाराष्ट्र प्रान्त के मांगीतुंगी पर्वत पर विश्व की सबसे ऊँची 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा से ही हो रहा है।

24 घंटे में एक बार आहार लेकर, केशलोंच एवं पदविहार जैसी कठिन साधना करते हुए ब्रह्मचर्य एवं चारित्र के तेज को सर्वत्र बिखेरने वाली पूज्य ज्ञानमती माताजी भारतीय संस्कृति की महान निधि हैं, जिन्होंने 15 अप्रैल 2006 को अपनी आर्यिका दीक्षा के 50 वर्षों को पूर्ण किया है। 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों से हुआ और सन् 2009 ''शांतिवर्ष'' के रूप में घोषित हुआ। राष्ट्रपति जी ने जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया।

वास्तव में आज के कलिकाल में भी आध्यात्मिक ज्ञान, चारित्र, साधना एवं मोक्षपथ को साकार करने वाले गुरुओं का जितना अभिनंदन किया जाये, उतना कम है। जो बिना कुछ कहे अपनी मुद्रा द्वारा ही शांति, संयम, सदाचार का उपदेश देते हैं ऐसे साधु इस भारत वसुन्धरा का गौरव हैं और जो भी प्राणी उनके चरणों में आश्रय प्राप्त कर लेते हैं, वे भी अपने जीवन को सार्थक कर लेते हैं।

ऐसी चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी के श्रीचरणों में भावभीना कोटिशः नमन है।

णमोकार धाम तीर्थ के प्रेरणास्रोत

क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज का संक्षिप्त परिचय

-जीवन प्रकाश जैन (प्रबंध सम्पादक)

दिनाँक 30 सितम्बर सन् 1940, आश्विन वदी 14, सोमवार के शुभ दिन सनावद (म.प्र.) के सुप्रसिद्ध श्रेष्ठी श्री अमोलकचंद जी सर्राफ की धर्मपत्नी श्रीमती रूपाबाई ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया, जिसका नाम रखा गया 'मोतीचंद'। आप कुल चार भाई और तीन बहनें रहे। बड़ी दो बहनें-श्रीमती गुलाबबाई व चतुरमणीबाई, एक छोटी बहन श्रीमती किरणबाई एंव नन्दरचंद, प्रकाशचंद और अरुण कुमार ये तीनों छोटे भाई। आपके परिवार का मूल व्यवसाय सराफे का रहा है।

ब्रह्मचर्य व्रत—इतने सम्पन्न परिवार के मध्य रहते हुए भी मोतीचंद जी को सांसारिक वैभव में रुचि नहीं रही और उन्होंने सन् 1958 में 18 वर्ष की उम्र में ही स्वरुचि से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया।

संघ में प्रवेश—सन् 1967 में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का संघ सहित सनावद में चातुर्मास हुआ। पूज्य माताजी को जब इनके ब्रह्मचर्य व्रत के बारे में पता चला, तो उन्होंने मोतीचंद को गृहत्याग हेतु संबोधित किया। चातुर्मास के पश्चात् पूज्य माताजी के साथ मोतीचंद जी ने मुक्तागिरी की यात्रा का कार्यक्रम बनाया। उसके पश्चात् पूज्य माताजी आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज (आचार्य शांतिसागर परम्परा के द्वितीय पट्टाचार्य) के संघ में आ गईं, तभी सन् 1968 में ब्र. मोतीचंद भी संघ में अध्ययन के उद्देश्य से आये और माताजी की प्रेरणा से संघस्थ शिष्य के रूप में रहने लगे।

धार्मिक शिक्षण—आपने पूज्य ज्ञानमती माताजी के पास गोम्मटसार जीवकांड, कर्मकांड, कातंत्र व्याकरण, परीक्षामुख, न्यायदीपिका, अष्टसहस्री आदि ग्रंथों का अध्ययन किया। तीन-चार वर्षों के अंदर आपने शास्त्री व न्यायतीर्थ की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर लीं। तब से सदैव आप पूज्य माताजी के पास रहकर चारों अनुयोगों के स्वाध्याय में तत्पर रहे।

जम्बूद्वीप रचना निर्माण में प्रमुख भूमिका—सन् 1965 में पूज्य आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के मस्तिष्क में जम्बूद्वीप रचना की योजना आई। जिसे साकाररूप देने में पूज्य माताजी के निर्देशानुसार कई स्थानों का निर्णय हुआ, किन्तु जिस भूमि पर योग था, वहीं इस रचना का निर्माण हुआ। ब्र. मोतीचंद जी ने संघ में आते ही पूज्य माताजी को यह लिखकर दिया कि ''मैं तन-मन-धन से आपकी इस योजना को सफल बनाऊँगा और आपके संयम में किसी प्रकार की बाधा नहीं आने दूँगा। आपको किसी से जम्बूद्वीप निर्माण हेतु पैसा देने की प्रेरणा भी नहीं करनी पड़ेगी।'' तब से लेकर सदैव उन्होंने अपने कर्तव्य का पालन कर इस अद्भुत रचना का निर्माण हस्तिनापुर की धरा पर सम्पन्न होने में प्रमुख भूमिका निभाई। यदि आपको वर्तमान का चामुण्डराय भी कहा जाये, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि आपने पूज्य माताजी को जन्मदात्री माँ से भी अधिक मानकर उनकी आज्ञा का पालन किया है।

त्यागमय जीवन—पूज्य माताजी ने प्रारंभ से ही इनकी सुकुमारता देखकर इन्हें अधिक

त्याग की प्रेरणा नहीं दी किन्तु सन् 1971 में जब माँ मोहिनी देवी (ज्ञानमती माताजी की माँ) को अजमेर में आचार्य श्री धर्मसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा लेते और उनका केशलोंच होते देखकर मोतीचंद जी के हृदय में परिवर्तन आया, वे सोचने लगे कि जब यह 13 सन्तानों को जन्म देकर 57 वर्ष की उम्र में दीक्षा ले सकती हैं, तो मैं संयम-नियम का पालन क्यों नहीं कर सकता ? आपने सन् 1981 में स्वरुचि से नमक और शक्कर इन दो रसों का त्याग कर दिया। 4 वर्ष के पश्चात् आपने उस त्याग के संकल्प को पूर्ण किया।

दीक्षा के पथ पर—सन् 1985 से आप दीक्षा के लिए आतुर थे किन्तु सन् 1987 में आपने पूज्य माताजी के समक्ष जम्बूद्वीप स्थल पर ही दीक्षा लेने की भावना व्यक्त की, तब माताजी ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की।

जम्बूद्वीप स्थल पर प्रथम ऐतिहासिक दीक्षा समारोह—पूज्य माताजी की भावनानुसार परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर महाराज ने संघ सहित हस्तिनापुर आगमन की स्वीकृति प्रदान की तथा फाल्गुन शुक्ला नवमी, 8 मार्च 1987 को शुभ मुहूर्त में विशाल जनसमुदाय के बीच आचार्यश्री ने मोतीचंद जी को क्षुल्लक दीक्षा देकर ''मोतीसागर'' नाम प्रदान किया।

पीठाधीश पद—दीक्षा के पश्चात् भी पूज्य क्षुल्लक मोतीसागर जी संस्थान की गतिविधियों में निर्देशन प्रदान कर अपने पद के योग्य कार्यों को सम्पन्न करवाते थे। अपने स्वाध्याय, पठन-पाठन व अपनी चर्या का निर्बाधरूप से पालन करते थे। इसी प्रकार सदा जम्बूद्वीप तीर्थ एवं यहाँ से संबंधित अन्य संस्थाओं का संचालन ऐसे ही त्यागी व्रती, गृहविरत व्यक्तित्व के द्वारा होता रहे, इसके लिए पूज्य माताजी ने सन् 1987 में जम्बूद्वीप तीर्थ पर एक धर्मपीठ बनाकर यहाँ पीठाधीश पद की स्थापना की। पूज्य माताजी के द्वारा निर्धारित नियमानुसार पीठाधीश पद पर सदैव सातवीं से ग्यारहवीं प्रतिमा धारी तक के किसी भी योग्य एवं संस्थान के प्रति समर्पित त्यागी-व्रती को अभिषिक्त किया जा सकता है। पूज्य माताजी द्वारा ऐसी धर्मपीठ पर सर्वप्रथम पीठाधीश के रूप में क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज को 2 अगस्त सन् 1987, श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन आसीन किया गया।

णमोकार धाम तीर्थ—चूँकि सनावद नगरी पूज्य महाराज जी एवं देश के अनेक मुनि-आर्यिकाओं की जन्मस्थली के नाम से प्रसिद्ध है अतः पूज्य महाराज की सदा ये भावना थी कि वहाँ पर कोई एक विशेष तीर्थ का निर्माण होवे अतः उनकी प्रेरणा से सन् 1996 में सनावद नगरी में पूज्य माताजी के आशीर्वाद से उनके संघ सान्निध्य में **णमोकार धाम तीर्थ** का शिलान्यास होकर णमोकार धाम तीर्थ का उद्भव हुआ।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के चरण सान्निध्य में 45 वर्षों के दीर्घ समय में उनसे अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त कर अपने ज्ञान व चारित्र की वृद्धि करते हुए पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज ने अपने जीवन को सार्थक किया।

इस प्रकार अनेक गुणों के पुंज पूज्य महाराज जी ने अपने जीवन का पल-पल एवं क्षण-क्षण धर्म एवं गुरु की आराधना में व्यतीत किया और अंत में 10 नवम्बर 2011, कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा, गुरुवार को मध्यान्ह 1.05 बजे मुनि अवस्था प्राप्त करके तीर्थ और गुरु की छत्र छाया में धर्म का उद्बोधन सुनते हुए सुन्दर समाधिमरण प्राप्त किया।उनके कार्यों, उपदेशों और आदर्शों के प्रति नमन करते हुए उस रत्नत्रयधारी आत्मा के प्रति हम भावभीना नमन अर्पित करते हैं।

पंचकल्याणक में सान्निध्य प्रदाता स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी का परिचय

(1) जन्म—आपका जन्म ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी (श्रुतपंचमी) को सन् 1950 में हुआ।

(2) जन्म स्थान—टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

(3) माता-पिता—माता मोहिनी देवी (आर्यिका श्री रत्नमती माताजी हुईं) एवं पिता श्री छोटेलाल जैन

(4) जन्म नाम—रवीन्द्र कुमार जैन

(5) शिक्षा—लखनऊ यूनिवर्सिटी से बी.ए. तक अध्ययन

(6) भाई बहन—9 बहनें एवं 3 भाई

(7) त्याग की प्रेरणा—सन् 1968 में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा 2 वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत

(8) आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत—सन् 1972 में आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज द्वारा, नागौर (राज.) में

(9) सप्तम प्रतिमा के व्रत एवं गृह त्याग—सन् 1987 में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा

(10) दशम प्रतिमा एवं पीठाधीश पदारोहण के संस्कार—मगसिर कृष्णा दशमी, 20 नवम्बर 2011, पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा

(11) उपाधि अलंकरण—

— **'कर्मयोगी'** (सन् 1992 में अ.भा. दि. जैन शास्त्री परिषद द्वारा)

— **'धर्मसंरक्षणाचार्य'** (सन् 1996 में मांगीतुंगी-महा. में पंचकल्याणक के अवसर पर वीर सेवा दल द्वारा)

— **'संस्कृति संरक्षक'** (सन् 2006 में भट्टारकवृंद द्वारा)

— **'धर्मालंकार'** (सन् 1996, मांगीतुंगी में)

— **'संस्कृति सार्थवाह'** (12 जून 2010, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में आयोजित ज्ञान ज्योति विद्वत् प्रशिक्षण शिविर के समापन अवसर पर समस्त विद्वत्जनों द्वारा)

— **'तीर्थोद्धारक'** (30 नवम्बर 2011, औरंगाबाद-महा.में

(12) विदेश यात्रा—भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष के अन्तर्गत सन् 2000 में न्यूयार्क-अमेरिका में आयोजित 'विश्वशांति शिखर सम्मेलन' में जैन धर्माचार्य के रूप में विशेष सहभागिता।

(13) साहित्यिक अवदान—विगत 38 वर्षों से संस्थान द्वारा प्रकाशित की जाने वाली सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका एवं वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित होने वाले ग्रंथों का सम्पादन कर प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में छपवाकर विशेष धर्मप्रचार में महत्वपूर्ण सहयोग।

(14) विशेष सौभाग्य—आपको पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी जैसी जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी के लघु भ्राता होने का सौभाग्य प्राप्त है। साथ ही आपकी अन्य दो बहनें (आर्यिका श्री अभयमती माताजी एवं चंदनामती जी) भी आर्यिका व्रतों का अनुपालन करते हुए आत्मकल्याण एवं धर्मप्रभावना के कार्य कर रही हैं। इसके साथ ही सबसे महान सौभाग्य यह है कि आपकी जन्म प्रदात्री माँ ने भी आर्यिका दीक्षा धारण करके रत्नमती नाम प्राप्त किया और अपने नारी जीवन को सफल किया, ऐसी पूज्य महान आत्माओं के समान आप भी स्वकल्याण एवं परकल्याण में सदैव तत्पर रहते हैं।